भावयोग

रविवार १.६.६९

आज कुछ बातें भावयोग के विषय में होंगी। भाव क्या है, योग क्या है और विषय क्या है? जिसे हम विषय कहते हैं यदि इसमें से 'य' हट जाये तो केवल विष रह जाता है। अर्थ यह है आप कुछ भी सुनो यदि यह मन हट जाये तब तो ये आपकी सुनी हुई बातें भी कोई अर्थ नहीं रखती। यह भी एक प्रकार का सुनने का विष है। विषय नहीं है, विष है। यह मन उसे स्वीकार करे तो यह 'विषय' है।

हम इसे प्रवचन क्यों कहते हैं? इसका अर्थ यह है – प्रभु के प्रति जो वचन (जो बातें) कही जायें उसी का नाम है – प्रवचन।

प्रभु के प्रति एक वचन है – "कि मैं संसार में प्राणी के रूप में जा रहा हूँ और प्राणी के रूप में जाता हुआ यदि मैं बच सका तो फिर मेरा वचन हे प्रभु, तू ही पालन करवा सकेगा। मुझमें इतनी शक्ति नहीं कि मैं बच सकूँ"। क्योंकि वचन है इसलिए बचना है, प्रश्न हो सकता है किससे बचना है? अपने ही मन से बचना है, अपने ही अहंकार से बचना है। लेकिन ये बचना तब होगा जब प्रभु के प्रति कुछ बोलेगा, कुछ सुनेगा। उस अवस्था में ये जितनी भी बातें हैं वे प्रभु की तरफ चली जायेंगी और मनुष्य बचता चला जायेगा और जिस निमित्त उसने प्रभु के वचन की बातें कहने की भावना रखी थी वह भी उसकी पूरी हो जायेगी।

इसे ही दूसरे शब्दों में हम यों कह सकते हैं – "हे प्रभु! जो तेरी बातें न कह सका, जो तेरी उपमा को, जो तेरी विशेषता को, जो तेरे भाव को,

भक्ति को, श्रद्धा को, विश्वास को समझ न सका वह इस संसार से बचकर निकल जाये – यह असम्भव है"। काजल की कोठरी से व्यक्ति यदि बचकर निकल भी आये बिना दाग के तो भी इस संसार से निकलना बड़ा असम्भव है। असम्भव इसलिये है कि प्रत्येक व्यक्ति प्रभु के चरणों में आत्मसमर्पण नहीं कर पाता, केवल मौखिक कहता है। प्रवचन सुनता है, बातें सुनता है, सप्ताह सुनता है, भागवत सुनता है, गीता पढ़ता है, तीर्थाटन करता है बहुत कुछ करता है लेकिन कौन कर्ता है इसे नहीं जानता। यह किसी की शक्ति कार्य करती है यह नहीं जानता। केवल अपने शरीर पर ही भार रखता है कि "मैं कर्ता हूँ"।

यह कौन-सी शक्ति है जो मनुष्य को देवता ही नहीं, भगवान बना देती है। वह भगवान की शक्ति है, इन्सान की नहीं। इन्सान बातें कह सकता है, बुद्धि बल पर थोड़ा कुछ बचने की इच्छा रखता है लेकिन यह तो कोई बचना नहीं कारण मन और बुद्धि का कर्ष (झगड़ा) होता ही रहता है, इसलिये मनुष्य को शान्ति नहीं मिलती है अन्यथा मनुष्य को शान्ति क्यों नहीं मिलेगी? केवल इतना ही नहीं – चित्त में भी चाव नहीं बढ़ाती वे बातें, अहंकार शून्य व्यक्ति हो नहीं पाता, ऐसी अवस्था में भी मनुष्य चाहे कि मैं वचन पूरा करूँ तो भगवान की यदि विशेष कृपा हो तो वह वचन पूरा कर सकता है।

कबीर ने भावुकता में यह बात कह दी – "ओढ़ के चुनरिया ज्यों की त्यों धर दीनी"। लेकिन जब तक उसकी कृपा न हो तब तक प्राणी 'चुनरिया' को समझेगा ही नहीं और यदि उसने चुनरिया को समझ भी लिया तो वह कौन-सी चीज चुननी है, वह कौन-सा भाव लेना है जिसके द्वारा इस संसार में रहता हुआ भी मनुष्य की चुनड़िया पर दाग न लगे।

क्या चुना उसने? उसने चुना धन, उसने चुना जन। तो जो धन और जन को चुनने में लगा है वह भजन को कब चुनेगा? ये जो चुनना है जिससे चुनड़ी पर दाग नहीं लगेगा यह तो तब न होगा कि उसने कोई ऐसी चीज चुन ली है कि वह संसार में रहे लेकिन संसार उसका कुछ न कर सके। वह हमेशा यह समझता है कि "मैं भूमि पर नहीं बैठा, मैं भूमि पति के अंक में बैठा हूँ " और जो अंक में बैठता है दुनिया चाहे उसे कलंक लगाये लेकिन उसे तो कलंक लग नहीं सकता। कैसे नहीं लग सकता? उसी प्रकार नहीं लग सकता जिस प्रकार मक्खन निकलने के बाद वह मक्खन मट्ठे में डूबता नहीं। यह है भक्ति।

और भाव? भाव तो भगवान किसी-किसी को देता है। और भावयोग? भावयोग तो बहुत ऊँची चीज है। हम लोग इतना ही समझते हैं कि भाव में आकर आँख से दो आँसू गिर पड़े वह भाव में आ गया – यह तो भाव का पहला सम्पर्क है जो अपनी भीतर की निरर्थक भावना को आँसू के रूप में बहा देना चाहता है। यथार्थ में भाव ही तो प्रभाव डालता है मनुष्य के हृदय में। जिसके हृदय में भाव नहीं उसके हृदय पर कभी प्रभाव नहीं पड़ सकता।

ये माला क्या है? भक्त कहता है – "माँ-ला, वह भाव ला, वह भावना ला कि मैं तुझे माला पहना करके जीवन को कृत्य-कृत्य समझूँ। मैं माला नहीं फेरूंगा, मा, ला कुछ ऐसा भाव दे, ऐसी विचारधारा दे कि हम बह जायें और हमारे हृदय में कभी यह भावना न आये कि हम जीव हैं, जीने के लिए आये हैं "।

जीव और शिव में अन्तर क्या है? जीव और शिव में सबसे बड़ा अन्तर यह है कि जो जीने के लिए जीता है अर्थात् जो केवल इसलिये जीता

है कि मैं खाऊँ, पीऊँ, मेरे बाल बच्चे हों, मेरा नाम-ग्राम इत्यादि हो ऐसा व्यक्ति जो जीवित है, वह जीव है। और जिसकी भावना में दिन-रात यही रहता है – "हे प्रभु! यदि सम्पूर्ण संसार के ऐश्वर्य को तूने विभूति समझ कर लगाया तो मुझे भी कुछ ऐसी भावना दे कि ये विभूति मेरे भी भीतर लगे, बाहर दुनिया को दिखाने के लिए नहीं। दुनिया मुझे देखकर ये न कहे – कि ये साधु है, कि ये भक्त है बल्कि ऐसी विभूति हृदय में रमा दे कि दुनिया का ऐश्वर्य दुनिया की सम्पत्ति मुझे छू न सके "। ऐसी भावना जिसके हृदय में दिन-रात किल्लोल करती रहती है वह 'शिव' है।

हींग अपनी गन्ध नहीं छोड़ता, चाहे उसके आस-पास कितना ही सेन्ट क्यों न डाल दो, कितना की कपूर क्यों न डाल दो। यदि हींग अपनी गन्ध नहीं छोड़ता तो भक्त भी अपनी भक्ति नहीं छोड़ता चाहे कुछ भी हो। भक्त वही है जो वक्त नहीं देखता, वह तो यह देखता है कि "मुझे समाना है"। समय की ओर क्या देखना है उसमें समा जाना है जिसके एक कण में सम्पूर्ण विश्व समाया हुआ है। और उस विश्व को हम इतना बड़ा देखते हैं। हमें तो उस विराट में ही समा जाना है।

ये पाँच महासागर, इन पाँच महासागरों को ही देखकर मनुष्य परेशान है, देश-विदेश को देखकर ही मनुष्य परेशान है। वह यह नहीं जानता कि वह जो सृष्टिकर्ता है उसके किसी अंश में, किसी कोने में, किसी रोम में भी यह विश्व स्थान नहीं पाता। इतना महान, इतना विराट, इतना विशेष भाव रखने वाला है वह।

हमारे लिये चीज बड़ी हो सकती है लेकिन उसकी नजर में क्या बड़ी होगी? उसने तो न जाने कितनी ही चीजें बनाकर दुनिया के सम्मुख

रख दी और अपना विराट भाव प्रस्तुत किया। जिस समय अर्जुन समझ नहीं सका भगवान के विराट भाव को शब्दों के भीतर, तब भगवान को लाचार होकर अपने ही शरीर में वह भाव दिखलाना पड़ा। कहा – "हे अर्जुन, तू मुझे शरीर के रूप में न देख, यह न समझ कि मैं केवल बाँसुरी बजाने वाला, गोपियों के साथ नाचने वाला और नाग को नाथने वाला ही हूँ, मैं तो जगन्नाथ हूँ, संसार को वश में करने वाला हूँ। जो चीज तूने कहीं नहीं देखी तू उसे मेरे हृदय में देख, जो भाव तुझे पहले कहीं नहीं मिला उसे यहाँ देख। संयोग मिलेगा, वह भाव मिलेगा, वह भावयोग होगा कि तू योग्य हो जायेगा और तुझे दुनिया की किसी बात की ओर ध्यान नहीं देगा पड़ेगा "।

बाबा की आरती में लिखा हुआ है – "जप, तप, योग बिना ज्ञान-सुधा प्याये" लेकिन बाबा के बच्चे ने कहा – "ज्ञान तो हो गया लेकिन हे सद्गुरु, जब तक भाव नहीं आया तो यह तेरा ज्ञान, यह तेरा जप, यह तेरा तप क्या करेंगे"? इसीलिये वह कहता है "जप, तप, योग बिना ही भाव-सुधा प्याये"। बिना जप के, बिना तप के भावरूपी अमृत पान करवाये सद्गुरु की कृपा से, वही सद्गुरु का बच्चा है, जो बचा हुआ है। क्योंकि माँ देखती है, उसे उन चीजों को छूने नहीं देती, व्यवहार में लाने नहीं देती, जो उसके लिए अमंगलकारी हो। सद्गुरु भी अपने बच्चे के हृदय में ऐसी भावना देता है। कहता है – "तू क्यों आया है? दुनिया देखने? चौरासी लाख योनियों में तू यदि दुनिया देख पाया तो क्या यह तेरे लिये नयी दुनिया है कि तू बार-बार देखने के लिए आता है और यों ही खाली हाथ चला जाता है? इस बार तू मनुष्य बनकर आया है, तू मानव बनकर आया है, तू कुछ ऐसा रूप लेकर आया है कि अब तुझे दुनिया नहीं देखनी पड़ेगी। अब तू उसे देख जिसे देखने के लिये तू आया है"। जब तू उसे देखने लगेगा तो दुनिया तुझे देखेगी

और कहेगी – पागल हो गया है, क्या करने आया है दुनिया में? दुनिया में तो ऐश-आराम करने के लिए मनुष्य आता है, आखिर यह कैसा आदमी है जो दुनिया के भोगों की तरफ ध्यान न रखता हुआ यहाँ तक कि भगवान को भी भोग का भोग लगाता हुआ किसी ऐसे योग में लगा हुआ है जिसे कहता है "भाव योग, भाव योग"।

यह कौन-सा योग है? लोगों ने प्रेम-योग की बात कही, कर्म-योग की बात कही, ज्ञान-योग की बात कही – यह भाव-योग क्या है? जिस पर सद्गुरु की कृपा हुई, उसने यह कहा – भाव-योग वह योग है जिसमें ज्ञान -योग डूब जाता है और कहता है – "मुझे ज्ञान नहीं चाहिए, मुझे तेरा भाव चाहिए। मैं पूजा करना नहीं जानता। तेरी पूजा बड़े-बड़े करके चले गये फिर भी तुझे खुश न कर सके। तू मुझे ऐसा भाव दे, तू मेरे ह्रदय में ऐसा समा जा कि मैं किसी से ये न पूछूँ कि कौन-सा रास्ता है। वह कौन-सा योग करूँ कि मैं तेरे योग्य बन सकूँ"।

यह भाव कौन देता है? सद्गुरु की वाणी देती है। और कहता है सद्गुरु – "तू किसको देखेगा, वह तेरे अंग-अंग में समाया हुआ है। तू उस अंग की ओर नहीं देखता, तू उस संग की ओर नहीं देखता। शरीर छूट जाता है, लेकिन वह नहीं छूटता, क्योंकि वह परमात्मा है"।

शरीर छूट जाता है लेकिन आत्मभाव कभी छूटता नहीं। क्योंकि जिस रोज आत्मभाव छूट जायेगा, उस दिन मनुष्य मनुष्य नहीं रहेगा। जिस वस्तु का भाव गिर जाये, उस वस्तु की कोई कीमत नहीं रहती। उसी तरह से यदि मनुष्य अपने भाव से गिर गया तो शरीर मनुष्य का है लेकिन वह मनुष्य

कहलाने के योग्य नहीं। आया है संसार में क्या करने? अभी तूने मनुष्य के ऊपर के कर्मों को ही देखा है भाव को नहीं। तू गणेश का भाव देख – इतना बड़ा स्थूल शरीर और छोटा-सा वाहन (चुहा) लेकर चलता है गणेश परिक्रमा करने। अपनी शक्ति देखता है, और अपना भाव भी देखता है। कहता है – "मैं दुनिया में क्यों घूमूँ, मेरी दुनिया मेरे माता-पिता, मुझे दुनिया से क्या मतलब। घूमें कार्तिकेय अपने मोर पर। दुनिया में जहाँ उसकी इच्छा हो चक्कर काटे, मेरी दुनिया तो मेरे माता-पिता हैं "। चक्कर काटता है माता पिता के चारों ओर इसलिये कि दुनिया का चक्कर कट जाये, इसलिये नहीं कि माता-पिता महान है। माता-पिता तो महान हैं ही लेकिन उन माता-पिता के चारों ओर चक्कर काट कर अपने हृदय का, दुनियादारी का चक्कर काट लेता है, खत्म कर लेता है। जैसे अग्नि किसी भी चीज का रूप नहीं रहने देती। आग के पास रखी हुई वस्तु को आग जलाकर अपना ही रूप बना लेती है, और उसकी भष्म को शिव ही धारण करता है। वैसे ही यह भाव कि अग्नि है, ज्ञान की अग्नि है जो जीवत्व भाव को भस्मीभूत करके शिव बना देती है।

बढ़ो आगे, चलो आगे, बैठो भाव से। जिस दिन आपके हृदय में भाव आ जायेगा आँख में आँसू होंगे और हृदय कमल खिल जायेगा। जिस हृदय कमल को खिलाने के लिए योगियों को न जाने कितने-कितने वर्षों तक प्रार्थना करनी पड़ती है। योगी योग के द्वारा और भोगी भोग के द्वारा उसे प्राप्त करना चाहता है। वह कहता है – "तू मुझे भाव से देख। तुझे योग की आवश्यकता नहीं, तुझे भोग की आवश्यकता नहीं, तू क्या भोग लगायेगा, तेरे पास है क्या – ते सड़ा-गला मन, ये संस्कार युक्त चौरासी लाख योनियों में चक्कर काट कर आया हुआ तन, कौन-सी चीज देगा तू, है क्या तेरे

पास" ? बड़े को देने के लिए उपहार भी बड़ा चाहिए इसलिये यदि मनुष्य ये कहे कि "हे प्रभु! मैंने मन दिया, तन दिया, धन दिया" तो वह कहता है – "नहीं, इन चीजों से मुझे काम नहीं, भाव चाहिए"। तन रहे लेकिन भाव यह रहे कि तेरा दिया हुआ है और धन रहे तो भाव यह रहे कि तेरा दिया हुआ है और यदि जन रहे तो यह कहे – मैं जननी तू जनक। तेरी कृपा से ये बच्चे हैं। मैं किसका पिता, मुझे तो तूने निमित्त बनाया है, पिता तो तू है जो जगत के दुःख रूपी विष को पी करके कहता है कि मैं पिता हूँ, मैं पीता हूँ, मैं शिव हूँ, संसार का विष पीने के लिये ही मैं संसार में आया हूँ।

निन्दा, स्तुति का विष जो मनुष्य को पागल कर देता है उसे शिव गले की शोभा बनाता है। वह कहता है – "मैंने संसार के सम्पूर्ण वैभव को, सम्पूर्ण सम्पत्ति को भस्म करके तन में लगाया है " तो दुनिया का विष और कौन पी सकता है। जो सम्पूर्ण धन को, सम्पूर्ण ऐश्वर्य को विभूति जानकर शरीर पर धारण करता है वही दुनिया के हलाहल का भी पान कर सकता है।

यदि मनुष्य केवल राख लगा कर 'शिव' होना चाहे और विष के स्थान पर भाँग, धतूरा खाकर गाँजा पीकर यदि शिव का रूप धारण करना चाहे तो यह तो स्थूल है, जिसमें सिवा पागलपन के और कुछ नहीं। चाहे शरीर के ऊपर राख लगी हो या नहीं, शिवत्व प्राप्त करने के लिए जब तक भाव-योग नहीं, भाव-योगी नहीं तब तक 'शिव-भाव' नहीं पा सकता। कारण यह है कि शिव सबका भला चाहता है और जो यह समझता है – "कि इसने मुझे गाली दी और यदि मैंने इसका बदला नहीं लिया तो क्या किया" वह कैसे शिव हो सकता है।

संसार के लोग (स्वयं को) जीव-जीव कहते हैं क्योंकि वे केवल जीना चाहते हैं शिव बनना नहीं चाहते। यदि वे शिव बनना चाहते तो उनके ह्रदय में ये भावना ही नहीं उठती कि "मैं जीव हूँ "। कारण यह है - प्रथम चाह, फिर राह है – जहाँ दुनिया की नहीं परवाह है। जब तक दुनिया की परवाह मनुष्य करता है तब तक वह कभी 'शिव' का भक्त नहीं हो सकता।

तो जब तक भाव नहीं आता है तब तक ही मनुष्य अभाव के दलदल में फँसा रहता है और रहेगा। हजार माला फेरे, हजार तीर्थाटन करे, चाहे वह अपने सम्पूर्ण शरीर का मुण्ड़न करवा ले तब भी उसमें परिवर्तन नहीं हो सकता। ह्रदय परिवर्तन के लिये भाव बदला, दुनिया बदली, भावयोगी हुआ, भाव में लीन हुआ – ये दुनिया क्या करेगी उसका।

यों तो भावयोग बहुत बड़ा और जो दिन रात भाव की बातें कहता है उसका स्वभाव भी भाव के रूप में ही हो जाता है। उसको स्वभाव बनाना नहीं पड़ता उसका तो स्वभाव ही है भाव। भगवान से पूछा – "हे भगवान, तू किस चीज का भूखा है"। तो कहा भगवान ने – "मैं भाव का भूखा हूँ "। लोग भजन में गाते हैं – "बासी, कूसी, लूखे, सूखे, हम तो विदुरजी भाव के भूखे"। हमें कुछ नहीं चाहिये, हमें तो केवल भाव चाहिए। "हे प्रभु! तू भाव देने वाला भी भाव का भूखा है "? यही तो विशेषता है। मैं देता हूँ भाव के लिए लेकिन लोग लेकर भी अभाव पैदा करते हैं। कहते हैं – इतना ही क्यों दिया। मैंने दिया प्रसन्न होकर और वे प्राप्त करके भी अभाव ही लेते हैं। सोने की लंका दी, एक लाख पुत्र दिये, सवा लाख नाती दिये, कमबख्त रावण के तब भी यह बात दिमाग में आई कि मुझे 'सीता' चाहिये पत्नी के रूप में। लोगों ने अनेक प्रकार से समझाया और कहा – "देख, ये गंधर्व और किन्नर

की कन्यायें तेरे चारों ओर खड़ी हैं रे मूर्ख, तू उस सीता रूपी आग से मत खेल – जल जायेगा, सपरिवार जल जायेगा। ये तेरी सोने की लंका जल जायेगी। जब भी तेरी कथा होगी, लोग घृणा से तेरे नाम पर थूकेंगे"। आज भी अपने लड़के का नाम रावण कोई नहीं रखता। लेकिन इतना कुछ होने के पश्चात् भी वह अपने अभाव को नहीं छोड़ता।

मनुष्य के भीतर एक बहुत बड़ी शक्ति है लेकिन उस शक्ति का दुरुपयोग मनुष्य करता रहता है क्योंकि उसके हृदय में भाव नहीं। प्रश्न हो सकता है दुरुपयोग कैसे करता है? प्रथम योग होता है तो उपयोग होता है। तो योग ही यदि नहीं हुआ तो उपयोग कैसे होगा अब दुरुपयोग ही हुआ। इसका अर्थ यह है कि उपयोग से जितना दूर होता चला जायेगा तो दुरुपयोग अपने आप ही होगा। भगवान की भक्ति से, भगवान के भाव से भगवान के प्रेम से जितना दूर होता जायेगा – वही व्यक्ति मनुष्य जीवन का दुरुपयोग करेगा। चूँकि वह दूर होता चला गया और जो मनुष्य जन्म लिया है उसका उपयोग नहीं कर पाया, तो जो तन, मन, धन का ही दास बना रहा है – वह भाव योगी कब बन सका?

यह "भाव योग" उन्हीं के लिए जो भाव योग के पुजारी हैं।

❋ ❋ ❋